ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 470-472

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

# भारत में पंचायत राज : औचित्य एवं चुनौतीयाँ

**शैलेन्द्र कुमार पाण्डेय**
सहायक आचार्य–राजनीति विज्ञान, सर्वोदय पी0जी0 कालेज, घोसी, मऊ (उ0प्र0) भारत

Received- 04.08.2020, Revised- 09.08.2020, Accepted - 12.08.2020 E-mail: rt92480@gmail-com

***सारांश :*** *एक लोकतान्त्रिक व्यवस्था का मौलिक उद्देश्य यह है कि शक्तियों का इस प्रकार वितरण या विकेन्द्रीयकरण किया जाय जिससे जनता अपने मामलों को अपने ही सक्रिय हस्तक्षेप द्वारा संभाले, अर्थात् लोकतन्त्र का विस्तार निचले स्तर तक हो। केवल शिखर पर जन सहभागिता ही–लोकतन्त्र नहीं है, इसका वास्तविक तात्पर्य है–राजनीति व्यवस्था के आधार–स्तर पर भी जन–सहभागिता।[1] अतः यह आवश्यक है कि ऊपर से निचे तक के स्तरों पर सत्ता का इस प्रकार विकेन्द्रीयकरण हो कि स्थानीय शासन की इकाईयां उसी क्षेत्र के लोगों के सहयोग से अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करें। डॉ0 साल्विन का मत है कि स्थानीय संस्थानों में स्वतन्त्र राष्ट्र की शक्ति निहित होती है।[2] अतः स्थानीय संस्थाओं के ऊपर राज्य सरकार व उससे ऊपर केन्द्रीय सरकार का निरीक्षण केवल सामयिक या औपचारिक ढंग का हो। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण (Democratic Decentralisation) अर्थात् पंचायती राज का आशय लोकतन्त्र को इस अर्थ में वास्तविक रूप देना है जिससे सबसे निचले स्तर के सामान्य जन को उसके अपने शासन–संचालन में सहभागी बनाया जा सके। इस प्रकार पंचायती राज लोकतन्त्र की मूल व्यवस्था "ystem of grass-roots Dimocracy) का दूसरा नाम हो जाता है जो देश के दूरस्थ गांवो की प्रशासनिक इकाईयों को क्षेत्रीय स्तर पर उच्च प्रशासनिक इकाईयों से जोड़ देता है। गाँधी जी की दृष्टि में "भारत के सच्चे लोकतन्त्र की इकाई गांव ही है।"[3,4]*

***कुंजीभूत शब्द– लोकतांन्त्रिक, मौलिक, शक्तियों, विकेन्द्रीकरण, पंचायती राज, मनुस्मृति, प्रशासनिक, इकाई गांव।***

भारत में पंचायती संस्थाएं उतनी ही प्राचीन हैं जितनी भारतीय सभ्यता। जनता की लोकप्रिय संस्थाओं अथवा ग्रामीण सरकारों के माध्यम से स्थानीय प्रशासन की व्यवस्था के स्पष्ट प्रमाण वैदिक युग से ही प्राप्त होते हैं। प्राचीन काल से ही भारत की ग्रामीण जनता को उसके ही द्वारा चुने गये पांच व्यक्तियों के समूह (पंच) द्वारा ही नियंत्रित रखा जाता था। मनुस्मृति[5] तथा महाभारत के शान्तिपर्व में ऐसे अनेकों प्रसंग मिलते हैं जहां ग्राम सभा या ग्रामीण संगठनों की चर्चा होती है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी ग्रामीण संगठनो का वर्णन आया है। वाल्मिकी रामायण में भी जनपद का उल्लेख है जो एक प्रकार का ग्रामीण गणराज्यों का संघ होता था। 10वीं शताब्दी में शुक्राचार्य के नीति सार में भी ग्रामीण गणराज्यों की चर्चा हुई है।[6] वास्तव में भारत में वैदिक काल से ही ग्राम को प्रशासन की मूल इकाई माना गया है। मैगस्थनीज ने तीसरी सदी ईस्वी पूर्व के एक नगर के शासन का वर्णन किया है। सर चार्ल्स मेटकाफ (1830) ने भारत में प्रचायती संस्थाओं के प्राचीनता का वर्णन किया है। भारतीय इतिहास के मुगल युग पर दृष्टिपात करने पर पता चलता है कि उस काल में भी देश में स्थानीय शासन विद्यमान था। अबुल फजल ने अपनी कृति "आईन–ए–अकबरी" में अनेक स्थानों पर स्वशासन ग्राम पंचायतों की व्यवस्था का उल्लेख किया है।

1947 में देश की स्वतंत्रता के साथ–साथ भारत में स्थानीय शासन के इतिहास में एक नया युग आरम्भ हुआ। केन्द्रीय प्रान्तीय और स्थानीय सभी स्तरों पर स्वशासन की स्थापना हुई। स्थानीय शासन को प्रथम बार राष्ट्रीय स्वतंत्रता के वातावरण में कार्य करने का अवसर मिला। 1948 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री राजकुमारी अमृत कौर की अध्यक्षता में 1947 में देश की स्वतंत्रता के साथ–साथ भारत में स्थानीय शासन के इतिहास में एक नया युग आरम्भ हुआ। केन्द्रीय प्रान्तीय और स्थानीय सभी स्तरों पर स्वशासन की स्थापना हुई। स्थानीय शासन को प्रथम बार राष्ट्रीय स्वतंत्रता के वातावरण में कार्य करने का अवसर मिला। 1948 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री राजकुमारी अमृत कौर की अध्यक्षता में प्रान्तों के स्थानीय स्वशासन मंत्रियों का सम्मेलन हुआ। यह अपने प्रकार का पहला सम्मेलन था। 1950 में नये संविधान के लागू होने के साथ ही स्थानीय शासन में एक नये दौर में प्रवेश किया। संविधान ने स्थानीय शासन को राज्यों की कार्य सूची के अन्तर्गत रखा है। संविधान में स्थानीय शासन के एक विशेष क्षेत्र (ग्रामीण क्षेत्र) के विकास की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। यह सर्वथा उपयुक्त भी है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र भारत का तीन–चौथाई भाग है।

**बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल–** उपर्युक्त सभी प्रयोजन असन्तोषजनक सिद्ध हुए। अतः भारत सरकार ने सामुदायिक परियोजनाओं तथा राष्ट्रीय विकास सेवा का अध्ययन दल नियुक्त किया जो इसके अध्यक्ष बलवन्तराय मेहता के नाम पर बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल कहा

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

जाता है। इस समिति की स्थपना आयोजन परियोजना समिति (Committee on Plan Project) ने की थी। समिति के समक्ष यह उद्देश्य रखा गया कि वह सामुदायिक परियोजनाओं तथा राष्ट्रीय प्रसार सेवा की समस्याओं का अध्ययन कर सारे देश में एकरूपी पंचायती राज लागू करने की योजना का प्रतिवेदन प्रस्तुत करें। निःसन्देह इस समिति के समक्ष यह समस्या खड़ी हो गयी कि किस प्रकार एक महान तथा सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक दशाओं में विविधतापूर्ण देश के लिए ऐसी योजना प्रस्तुत की जाय जो सभी भागों को मान्य हो। मेहता समिति ने 1957 में प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में यही सुझाव भी दिया औरर बाद में राष्ट्रीय विकास परिषद ने उसकी पुष्टि भी कर दी कि 'पंचायती राज योजना के बारे में कोई वृहत् प्रतिमान बना दिया जाय जो अत्यन्त लचीला हो क्योंकि कोई एक कठोर योजना प्रस्तुत करना केवल एक कठिन कार्य ही नहीं बल्कि असम्भव भी होगा।' अतः भारत सरकार ने यह आग्रह नहीं किया कि प्रत्येक राज्य एक ही नमूने की पंचायती राज व्यवस्था अपनाये। मेहता समिति के सुझावों को मानते हुए यह कहा गया कि पंचायती राज के कुछ मूल सिद्धान्त इस प्रकार हैं13–

1. ग्राम से लेकर जिले तक स्थानीय स्वशासन का त्रिस्तरीय ढांचा हो, जिसमें निचले स्तर पर ग्राम तथा सबसे ऊपरी स्तर पर जिला और दोनों के बीच जोड़ने वाली कुछ मध्यस्थ संस्थाए हों।
2. स्थानीय स्वशासन की इन संस्थाओं के पक्ष में सत्ता का विशुद्ध हस्तांतरण हो।
3. इन संस्थाओं के पक्ष में पर्याप्त संसाधनों का हस्तांतरण ताकि वे अपने दायित्वों को पूरा कर सकें।
4. नियोजन संबंधी आर्थिक व सामाजिक विकास के सभी कार्यक्रमों का संचालन इन्हीं संस्थाओं द्वारा हो। अध्ययन दल ने इसे लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण नाम दिया।14

**अशोक मेहता समिति–** पंचायती राज संस्थाओं के गतिशील होने के बावजूद संसाधनों की कमी तथा अनियमित चुनाव के कारण वे क्रमशः निष्क्रिय होती गयीं। अतः इसके कार्य–निष्पादन के पुनरीक्षण हेतु सन् 1977 में अशोक मेहता की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गयी जिसने 1978 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में 132 सिफारिशें पेश की। इसमें से मुख्य इस प्रकार हैं–

1. पंचायत राज का ढांचा त्रिस्तरीय के स्थान पर द्विस्तरीय जिसमें नीचे मंडल पंचायत को और ऊपर जिला परिषदें। मंडल पंचायतों में 15 से 20 हजार तक की आबादी वाले 10–15 ग्राम होंगे। मंडल पंचायत में साधरणतया एक केन्द्रीय ग्राम होगा और उसमें जुड़े आस–पास के गांव।
2. जिला परिषद में निर्धारित क्षेत्रों के निर्वाचित सदस्य तथा पंचायत समितियों के अध्यक्ष आदि सम्मिलित होगें। मंडल पंचायतों तथा जिला परिषदों के कार्यकाल चार वर्ष होने चाहिये।
3. पंचायती राज संस्थाओं को अपने संसाधन जुटाने हेतु उन्हें करारोपण की शक्ति प्रदान करने के उद्देश्य से संविधान में संशोधन किया जाय।
4. विकास संबंधी कार्यक्रमों की योजना जिला परिषदे बनायें और उन पर क्रियान्वयन मंडल पंचायतें करें।
5. पंचायती राज संस्थाओं का नियमित चुनाव हो जो मुख्य निर्वाचन आयुक्त परामर्श से राज्य के मुख्य चुनाव अधिकारी द्वारा कराया जाय।

**राव समिति–** ग्राम विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं की भागीदारी को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से केन्द्रीय कृषि मंत्रालय ने 1985 में जी.वी. राव की अध्यक्षता में एक समिति गठित की। इस समिति का कार्य ग्राम विकास के लिए विद्यमान प्रशासनिक व्यवस्थाओं की समीक्षा करना, और गरीबी दूर करने के कार्यक्रम की समीक्षा करना था। इस समिति के अनुसार जहां भी पंचायती राज निकाय सक्रिय रूप से कार्य कर रहे हैं। वहां ग्राम विकास कार्यक्रमों का निष्पादन निश्चित रूप से अच्छा रहा है। समिति ने चार सोपानों वाली प्रणाली की सिफारिश की थी जिसमें राज्य विकास परिषद, जिला परिषद, मंडल पंचायत और ग्राम सभा होंगी।

**सिंघवी समिति तथा 64वां संविधान संशोधन विधेयक–** भारत सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं को पुनर्जिवित करने के बारे में एक संकल्पना पत्र तैयार करने के लिए डॉ0 एल0एम0 सिंघवी की अध्यक्षता में जून, 1986 में एक समिति ने सिफारिश की कि पंचायती राज संस्थाओं को संविधान में एक नया अध्याय शामिल कर संवैधानिक तौर पर मान्यता, संरक्षण और स्थायित्व प्रदान किया जाना चाहिए। इसमें पंचायती राज संस्थाओं को संविधान में एक नया अध्याय शामिल कर संवैधानिक तौर पर मान्यता, संरक्षण और स्थायित्व प्रदान किया जाना चाहिए। इसमें पंचायती राज संस्थाओं के नियमित, स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए संवैधानिक प्रावधान करने का भी सुझाव दिया गया था।

**संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम–** 22 दिसंबर 1992 को लोकसभा में संविधान (72वां संशोधन) विधेयक 1991 पारित किया गया और राज्य सभा ने 23 दिसंबर 1992 को इस पर अपनी स्वीकृति दे दी। इसके बाद 17 राज्यों ने इस विधेयक को अपने–अपने राज्यों में


PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

स्वीकार किये जाने के आशय की सूचना केन्द्र सरकार को प्रेषित कर दी। राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होने पर इसे 24 अप्रैल 1993 से अधिनियमित कर दिया गया। इसी तिथि से यह पूरे देश में लागू हो गया है। सभी राज्यों ने इस विधेयक को ध्यान में रख कर अपने–अपने पंचायती विधेयक, पारित कर दिये है।18

इस अधिनियम की विशेषताओं को दो भागों में बांटा जा सकता है– अनिवार्य तथा ऐक्षिक। अनिवार्य वे हैं जो संवैधानिक है और ऐक्षिक वे हैं जिन्हें राज्य की इच्छा पर छोड़ दिया गया है।

**अनिवार्य विशेषताओं में हैं –**

(1) ग्राम पंचायत का ग्राम स्तर पर गठन,

(2) ग्राम सभाओं का गठन,

(3) गांव, ब्लाक तथा जिला स्तर पर त्रिस्तरीय व्यवस्था (ऐसे राज्य, जिनकी जनसंख्या 20 लाख से कम है, में मध्यम स्तर को छोड़कर)

(4) सभी स्तर पर, सभी पदो के लिए, सभी सदस्यों का सीधा चुनाव,

(5) मध्यम व शीर्ष स्तरों का अध्यक्ष का अप्रत्यक्ष चुनाव,

(6) अध्यक्ष व सदस्यों के लिए न्यूनतम आयु 21 वर्ष,

(7) अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में घूर्णनात्मक आधार (Rotation) पर पंचायत के सदस्यों एवं अध्यक्ष के पदों पर आरक्षण,

(8) पंचायतों में एक तिहाई पदों (सदस्य व अध्यक्ष) पर महिलाओं के लिए आरक्षण (अनुसूचित जाति व जनजाति) की महिलाओं के लिए भी एक तिहाई आरक्षण,

(9) पांच वर्षीय अवधि,

(10) भंग या बर्खास्त होने की स्थिति में 6 माह के अन्दर नये चुनाव,

(11) इस संस्थाओं की वित्तीय स्थिति की समीक्षा करने तथा इन्हे राज्य द्वारा वित्तिय संसाधनों के आवंटन की सिफारिश हेतु प्रत्येक पांच वर्श के लिये वित्त आयोग का गठन,

(12) राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना।

**ऐक्षिक विशेषतायें इस प्रकार हैं –**

(1) सांसदो व विधायकों को मध्यम स्तर व उच्च स्तर पर मत देने का अधिकार,

(2) पिछड़ों को आरक्षण देने का अधिकार,

(3) कर, अनुदान, लेवी तथा शुल्क के मार्फल सशक्त वित्तिय प्रबंध,

(4) पंचायतों को स्वायत्त संस्थायें बनाने का अधिकार आदि।

**चुनौतियां–** भारत में स्वतंत्रता के बाद किये गये राजनीतिक सुधारों में पंचायती राज की स्थापना सर्वाधिक महत्व पूर्ण है। इसके बाद भारत के गांव की रूप–रचना और प्रकृति में अनेक परिवर्तन आये हैं लेकिन पिछले अनेक वर्शों से पंचायत व्यवस्था निष्प्राण रही है स्वतंत्रता के पश्चात् सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के माध्यम से जो पंचायत प्रणाली लागू हुई वह ग्रामीणों की आकांक्षाओं की पूर्ति करने में असमर्थ सिद्ध हुयी क्योंकि लक्ष्य समूहों और स्थानीय नौकरशाही के बीच बहुत अधिक दूरी थी। इससे यह स्पष्ट हो गया कि स्थानीय ग्रामीणों की भागीदारी के बिना ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की सफलता नहीं मिल सकती। परन्तु ग्रामीण भारत की समस्यायें भी अनेक स्थान पर सतत रूप से विद्यमान हैं, यथा–जन साक्षरता का अभाव, राजनीतिक चेतना का अभाव, निःस्वार्थ नेतृत्व का अभाव, अलोकतंत्रीय सामाजिक तथा पारिवारिक ढांचा, जाति तथा धार्मिक निष्ठायें इत्यादि। इस प्रकार उपयुक्त राजनीतिक और लोकतांत्रिक संस्कृति के अभाव में तमाम संस्थायें और लोकतांत्रिक प्रक्रियायें मजाक बन कर रह जाती हैं।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. विनोबा जी की दृष्टि में जनता का मत व सहयोग ही सबकुछ है उनका मन्त्र है, "जनशक्ति जागृत होनी चाहिये, वह सब कुछ कर सकेगी।" जयप्रकाश नारायण, ग्राम संकल्प का महत्व, कुरूक्षेत्र, जून 1998, वर्ष 43, अंक 8, पृ0–29.
2. डॉ0 एस0सी0 सिंहल, भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन एवं भारतीय गणतंत्र का संविधान, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 2003–04 पृ0–309.
3. हरिजन 18–1–1948.
4. गाँधी जी, "मेरे सपनों का भारत" (सप्तम् संस्करण) सर्व सेवा संघ प्रकाशन वाराणसी, 1995, पृ0–26.
5. डॉ0 ए0पी0 अवस्थी, भारतीय राजनीतिक विचारक लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, चतुर्थ संशोधित संस्करण, 2005–06 पृ0–32.
6. रामनरेश वर्मा, संविधान की स्वर्ण जयन्ती और ग्राम पंचायतें, कुरूक्षेत्र जनवरी 2000, वर्ष 45, अंक 3 पृ0–11.
7. डॉ0 अशोक कुमार, प्रशासनिक चिन्तक, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा 2005–6 पृ0–39.
8. लार्डरिपन को स्थानीय शासन का पिता कहा जाता है। सुनील कुमार सिंह, सामान्य ज्ञान, लुसेन्ट पब्लिकेशन, पटना 2000, पृ0–180.
9. ए0पी0 दिक्षीत, पंचायतों में गाँधीवाद, उत्तर प्रदेश पंचायतों के चार वर्ष, सस्मारिका 1975, पृ0–29.

*****


PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*